दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

के समक्ष

माननीय न्यायमूर्ति श्री पुरुषेंद्र कुमार गौरव

नि.द्वि.अ.123/2019 और सि.वि.आ.28877/2019
RSA 123/2019 & CM APPL.28877/2019

इनके मध्य:-

इकबाल सिंह, विधिक प्रतिनिधिगण के माध्यम से
श्री उमराव सिंह के सुपुत्र
(दिवंगत, विधिक प्रतिनिधिगण के माध्यम से)

क. श्रीमती कमलेश
स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह की विधवा
(दिवंगत, विधिक प्रतिनिधिगण के माध्यम से)

ख. श्री सुरेश सिंह
स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह के सुपुत्र
(दिवंगत, विधिक प्रतिनिधिगण के माध्यम से)

I. श्रीमती सर्वेश
स्वर्गीय श्री सुरेश सिंह की विधवा

II. राहुल सिंह
स्वर्गीय श्री सुरेश सिंह के सुपुत्र

सभी मकान सं. 6/49,
विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-110032 के निवासी

III. सुश्री प्रियंका चौधरी कौशिक
श्री अमित कौशिक की पत्नी

स्वर्गीय श्री सुरेश सिंह की सुपुत्री
पी-39, गली नं. 3
शंकर नगर एक्सटेंशन, दिल्ली-110051 के निवासी

IV. सुश्री यामिनी चौधरी
श्री सुमित मेहरोत्रा की पत्नी
स्वर्गीय श्री सुरेश सिंह की सुपुत्री
108-डी, पॉकेट-ई
दिलशाद गार्डन, दिल्ली-110095 के निवासी

ग. श्रीमती बिमलेश
स्वर्गीय श्री बलराज सिंह की विधवा
(स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह के पूर्व दिवंगत सुपुत्र)

I. श्री सचिन
स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह के सुपौत्र

II. श्री नितिन
स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह के सुपौत्र

III. सुश्री मीनाक्षी
स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह की सुपौत्री

IV. श्रीमती अनीता
स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह की सुपौत्री

सभी मकान सं. 6/49,
विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-110032 के निवासी

घ. श्रीमती राजबाला
श्री राजेन्द्र सिंह की पत्नी
स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह की सुपुत्री
गाँव जलालपुर

डाकघर मुरादनगर, जिला गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश के निवासी

ङ. श्रीमती सरोज बाला
श्री जगत सिंह की पत्नी
स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह की सुपुत्री
डब्ल्यूजेड-305, पालम गाँव, दिल्ली के निवासी

च. श्रीमती सरिता बाला
श्री आशीष कुमार की पत्नी
स्वर्गीय श्री इकबाल सिंह की सुपुत्री
गाँव एवं डाकघर.: शांगि
जिला रोहतक, हरियाणा के निवासी

.....अपीलार्थीगण

(इनके माध्यम से: -श्री चौ. रबिन्द्र सिंह, सुश्री एकता सिंह, श्री आसिफ अली, सुश्री प्रीति गर्ग, अधिवक्तागण)

और

हरी किशन लाल, विधिक प्रतिनिधिगण के माध्यम से
श्री कांशी नाथ अरोड़ा के सुपुत्र
(दिवंगत, विधिक प्रतिनिधिगण के माध्यम से)

क. श्रीमती शकुंतला देवी
स्वर्गीय श्री हरी किशन लाल की पत्नी

ख. श्री गोपाल अरोड़ा
स्वर्गीय श्री हरी किशन लाल के सुपुत्र

ग. श्री अशोक अरोड़ा
स्वर्गीय श्री हरी किशन लाल के सुपुत्र

घ. श्री सुभाष अरोड़ा
स्वर्गीय श्री हरी किशन लाल के सुपुत्र

सभी 727, लखपत सिंह लेन
बेगम ब्रिज, मेरठ, उत्तर प्रदेश के निवासी .....प्रत्यर्थीगण

(इनके माध्यम से: -श्री दीपक खोसला और श्री अनूरूप पी. एस., अधिवक्ता)

सुरक्षित : 29.11.2024
उद्घोषित : 28.01.2025

<u>निर्णय</u>

वर्तमान अपील में, नि.द्वि.अ. सं. 38/2019 (RCA No.38/2019) में दिनांक 23.03.2019 को पारित निर्णय और डिक्री को आक्षेपित किया गया है, जिसमें सि.अ. संख्या 22/07 (CA No.22/07) वाले सिविल वाद में दिनांक 30.04.2007 को पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध अपीलार्थीगण/वादीगण द्वारा दायर अपील को खारिज कर दिया गया था, जिसके तहत अपीलार्थीगण/वादीगण द्वारा घोषणा, कब्जे और व्यादेश की मांग करते हुए दायर किए गए सिविल वाद को विचारण न्यायालय ने खारिज कर दिया था।

2. वर्तमान मामले में विवाद मुख्य रूप से लगभग पाँच दशकों तक चलने वाले एक वाद (lis) से संबंधित है, जिसकी उत्पत्ति 30.11.1974 को मूल वादी, इकबाल सिंह द्वारा स्थायी व्यादेश (Permanent Injunction) के लिए दायर एक सिविल वाद से हुई थी। उपरोक्त सिविल वाद को पहले दिनांक 30.01.1978 के निर्णय और डिक्री के माध्यम से डिक्री कर दिया गया था और

उक्त डिक्री से व्यथित होकर, मूल प्रतिवादी ने एक अपील दायर की थी। अपीलीय कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, मूल वादी ने यह कहते हुए सिविल वाद वापस ले लिया कि इसे केवल इस डर/आशंका के कारण दायर किया गया था कि उसे बलपूर्वक प्रश्नगत भूमि से बेदखल कर दिया जाएगा। तत्पश्चात, दिनांक 13.03.1981 को, मूल वादी ने यह आरोप लगाते हुए वर्तमान वाद दायर किया कि प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण ने कानून प्रवर्तन अधिकारियों के साथ मिलीभगत करके उसे डराया-धमकाया और उसे बेदखल करने की धमकी दी।

3. वाद के लंबित रहने के दौरान, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (Cr.P.C.) की धारा 145 के तहत कार्यवाही शुरू की गई, जिसके परिणामस्वरूप दिनांक 25.04.1981 के आदेश के माध्यम से वादग्रस्त संपत्ति की कुर्की की गई। तत्पश्चात, दिनांक 23.06.1985 के आदेश द्वारा, उप-जिला दंडाधिकारी ने निर्देश दिया कि वादग्रस्त संपत्ति का कब्जा प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण को सौंप दिया जाए, और तदनुसार, कुर्की आदेश वापस ले लिया गया। उक्त आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका (Revision Petition) दायर की गई थी जिसे खारिज कर दिया गया था, और उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) के समक्ष दायर विशेष अनुमति याचिका (SLP) को इस अनुमति (liberty) के साथ वापस ले लिया गया था कि वाद संपत्ति के संबंध में प्राप्तकर्ता (Receiver) की नियुक्ति के लिए सिविल न्यायालय में आवेदन किया जा सकता है।

4. विचारण न्यायालय (Trial Court) ने निम्नलिखित मुद्दे/विवादक (Issues) तय (विरचित) किए:

1. क्या वादी वादग्रस्त संपत्ति का स्वामी और उस पर काबिज (Possession) है? यदि हाँ, तो इसका क्या प्रभाव होगा? (साबित करने का भार: वादी पर)
2. क्या यह वाद आवश्यक पक्षकारगण को शामिल न करने (Non-joinder) के कारण दोषपूर्ण है, जैसा कि लिखित बयान (WS) में आरोप लगाया गया है? (साबित करने का भार: प्रतिवादी पर)
3. क्या यह वाद सिविल प्रक्रिया संहिता (CPC) के आदेश 23 नियम 1(4) के तहत वर्जित है? (साबित करने का भार: प्रतिवादी पर)
4. क्या अपीलार्थी अपने स्वयं के कृत्य, आचरण और मौन सहमति (Acquiescence) के कारण वर्तमान वाद दायर करने से विबंधित (Estopped) है? (साबित करने का भार: वादी पर)
5. क्या अपीलार्थी इच्छित व्यादेश (Injunction) पाने का हकदार है? (साबित करने का भार: वादी पर)
6. क्या प्रत्यर्थी विशेष हर्जाना (Special Costs) पाने के हकदार हैं? (साबित करने का भार: प्रतिवादी पर)
7. राहत (Relief)।

वाद में संशोधन के बाद 13.05.1988 को निम्नलिखित अतिरिक्त मुद्दे/विवादक (Issues) तय (विरचित) किए गए:

7. क्या वाद का मूल्यांकन सही है और न्यायालय शुल्क (Court Fee) एवं क्षेत्राधिकार के प्रयोजनों के लिए पर्याप्त रूप से स्टाम्पित है?
8. क्या वाद परिसीमा (Limitation) के भीतर है?
9. क्या वाद 'पूर्व न्याय' (Res Judicata) के सिद्धांत द्वारा वर्जित है?
10. क्या वाद सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2 नियम 2 के तहत वर्जित है?

5. तत्पश्चात, दिनांक 30.04.2007 के निर्णय और डिक्री के माध्यम से, विचारण न्यायालय ने यह कहते हुए वाद को खारिज कर दिया कि वर्तमान वाद सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश XXIII नियम 1(4) के प्रावधानों के साथ-साथ पूर्वन्याय (res judicata) के सिद्धांत के तहत वर्जित था। विचारण न्यायालय ने आगे यह भी टिप्पणी की कि प्रतिवादी की पत्नी को पक्षकार न बनाने (non-impleadment) के कारण यह वाद आवश्यक पक्षकारगण को शामिल न करने (non-joinder) के दोष से ग्रसित था, क्योंकि प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत और भरोसा किए गए स्वामित्व के दस्तावेजों के आधार पर उन्हें ही प्रश्नगत संपत्ति का स्वामी दिखाया गया था। इसके अतिरिक्त, विचारण न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि यह वाद परिसीमा (limitation) द्वारा वर्जित था।

6. तत्पश्चात, अपीलार्थीगण/वादीगण ने एक अपील दायर की, जिसका निर्णय 04.05.2009 को उनके पक्ष में हुआ, जिसके परिणामस्वरूप सिविल वाद को डिक्री कर दिया गया। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने पाया कि मूल वादी ने लगातार यह रुख बनाए रखा कि न तो उन्होंने और न ही उनके पिता ने कभी भी वादग्रस्त संपत्ति किसी को बेची थी।

7. इसके पश्चात, प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण द्वारा दिनांक 04.05.2009 के निर्णय और डिक्री को इस न्यायालय के समक्ष नि.द्वि.अ. सं. 66/2009 (RSA No.66/2009) के माध्यम से चुनौती दी गई थी। उक्त नि.द्वि.अ. (RSA) का

निर्णय 30.05.2011 को किया गया, जिसमें निम्नलिखित अतिरिक्त मुद्दा तय (विरचित) किया गया और इसे अधिनिर्णय के लिए प्रथम अपीलीय न्यायालय को वापस भेज दिया गया था:-

> *"1. क्या विश्वास नगर, दिल्ली की आबादी में स्थित संपत्ति संख्या 50 से 53, जिसका माप 780 वर्ग गज है और जो मौजा चंदावली उर्फ शाहदरा, दिल्ली की राजस्व संपदा में स्थित खसरा नंबर 807 और 806 के अंतर्गत आती है, का विक्रय दिनांक 21.10.1937 को प्रभावी हुआ था और यदि ऐसा है, तो इसका क्या प्रभाव होगा?"*

8. तत्पश्चात, आक्षेपित निर्णय और डिक्री के माध्यम से, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपील को खारिज करते हुए उपरोक्त मुद्दे का निर्णय अपीलार्थीगण/वादीगण के विरुद्ध और प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण के पक्ष में किया। अतः, अपीलार्थीगण/वादीगण वर्तमान अपील के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित हैं।

9. "अपीलार्थीगण/वादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री च. रबिंद्र सिंह ने यह दलील दी कि दिनांक 21.10.1937 का विक्रय विलेख (sale deed), जिस पर प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण का पूरा मामला आधारित है, उचित रूप से सिद्ध नहीं हुआ था क्योंकि मूल विक्रय विलेख कभी भी न्यायालय में प्रस्तुत नहीं किया गया था और प्रथम अपीलीय न्यायालय इस तथ्य पर विचार करने में विफल रहा कि कथित विक्रय विलेख दिनांक 21.10.1937 की प्रति पर श्री उमराव सिंह के हस्ताक्षर या अंगूठे का निशान मौजूद नहीं था। उन्होंने आगे यह दलील दी कि चूंकि दिनांक 21.10.1937 के कथित विक्रय विलेख

(sale deed) को सिद्ध करने का भार पूरी तरह से प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण पर था, इसलिए यह प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण के लिए अनिवार्य था कि वे प्राथमिक साक्ष्य के रूप में मूल विक्रय विलेख प्रस्तुत करें और तत्पश्चात, लागू विधिक सिद्धांतों के अनुसार इसे सिद्ध करें।

10. इसके अलावा, विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, दिनांक 21.10.1937 के विक्रय विलेख (sale deed) का प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण के अभिवचनों (pleadings) में विचारण न्यायालय, प्रथम अपीलीय न्यायालय और द्वितीय अपीलीय न्यायालय के समक्ष कार्यवाही के दौरान कहीं भी कोई उल्लेख नहीं मिला।

11. इसके अलावा, अपीलार्थीगण/वादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह दलील दी कि द्वितीयक साक्ष्य (secondary evidence) पर भरोसा करने के लिए, प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण के लिए यह अनिवार्य (sine qua non) था कि वे संतोषजनक साक्ष्य के माध्यम से प्राथमिक साक्ष्य (primary evidence) को प्रस्तुत न कर पाने के कारणों को सिद्ध करें। उनके अनुसार, कथित विक्रय विलेख (sale deed) के पंजीकरण अभिलेख के रूप में द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए आवश्यक प्रक्रियात्मक आवश्यकता का पालन नहीं किया गया था।

12. अपीलार्थीगण/वादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने विधि के निम्नलिखित सारवान प्रश्न प्रस्तावित किए:

"(i) क्या इस माननीय न्यायालय द्वारा नि.द्वि.अ. 66/09 (RSA 66/09) में दिनांक 30.05.2011 के आदेश के माध्यम से तय किए गए मुद्दे पर अपीलीय न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्ष कानून और तथ्यों के आधार पर त्रुटिपूर्ण (perverse) हैं।

(ii) क्या मूल दस्तावेज की अनुपस्थिति में और प्रस्तुत की गई कथित प्रति पर विक्रेता एवं गवाहों के हस्ताक्षर और अंगूठे का निशान न होने की स्थिति में, दिनांक 21.10.1937 के कथित विक्रय विलेख (Sale Deed) के निष्पादन का अनुमान लगाया जा सकता है।

(iii) क्या दिनांक 21.10.1937 के कथित विक्रय विलेख के निष्पादन को केवल कथित पंजीकरण अभिलेख प्रस्तुत करके सिद्ध किया जा सकता है और क्या उस आधार पर भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 90 के तहत वैधानिक अनुमान (statutory presumption) लागू किया जा सकता है।

(iv) क्या प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण द्वारा किसी भी दावे या प्रतिदावे (claim/counterclaim) की अनुपस्थिति में, केवल दिनांक 21.10.1937 के कथित विक्रय विलेख (Sale Deed) के आलोक में उस मुद्दे पर दर्ज किए गए एक मात्र निष्कर्ष के आधार पर, अपीलार्थी (अब उनके विधिक प्रतिनिधि) को वादग्रस्त भूमि/संपत्ति के स्थापित भौतिक कब्जे (settled physical possession) से वंचित किया जा सकता है।"

(v) क्या दिनांक 21.10.1937 के कथित विक्रय विलेख के बावजूद (यद्यपि इसके निष्पादन से इनकार किया गया है), भौतिक कब्जा बनाए रखने के कारण अपीलार्थीगण/वादीगण ने वादग्रस्त भूमि/संपत्ति पर प्रतिकूल कब्जे (adverse possession) के माध्यम से पूर्ण अधिकार प्राप्त नहीं कर लिया है।

(vi) क्या निर्धारित अवधि के भीतर वादग्रस्त संपत्ति का कब्जा न मांगने के कारण प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण का कथित अधिकार, हक या हित समाप्त हो जाता है?"

13. इसके विपरीत, प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री दीपक खोसला ने उपरोक्त दलीलों का पुरजोर विरोध किया और यह दृढ़तापूर्वक कहा कि प्रथम अपीलीय न्यायालय के निष्कर्ष विधिक रूप से

सुदृढ़ हैं, साक्ष्यों द्वारा समर्थित हैं और किसी भी महत्वपूर्ण त्रुटि से मुक्त हैं। इसके अलावा, उन्होंने जोर देकर कहा कि उक्त विक्रय विलेख भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 90 के तहत स्वीकार्य था, जो 30 वर्ष से अधिक पुराने दस्तावेजों के लिए उनकी प्रामाणिकता की उपधारणा प्रदान करता है। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि उक्त विक्रय विलेख (sale deed) की प्रमाणित प्रति ने, जिसे राजस्व अभिलेख और नामांतरण (mutations) का समर्थन प्राप्त है, उमराव सिंह से प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण के पूर्व-हितधिकारी (predecessor-in-interest) श्री प्राण नाथ सरवरिया को स्वामित्व के वैध अंतरण को साबित किया।

14. विद्वान अधिवक्ता ने, इसलिए, यह दृढ़तापूर्वक कहा कि वर्तमान अपील में विचार के लिए कानून का कोई सारवान प्रश्न (substantial question of law) उत्पन्न नहीं होता है, और विक्रय विलेख (sale deed) की वैधता को विधिक आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती क्योंकि वह पहले ही अंतिमता (finality) प्राप्त कर चुका है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि प्रतिकूल कब्जे (adverse possession) का कोई भी वैकल्पिक तर्क या पूर्व-हितधिकारी (predecessor-in-interest) के माध्यम से वादग्रस्त संपत्ति में स्वामित्व का दावा, कानून का ऐसा कोई सारवान प्रश्न नहीं उठा सकता जो वर्तमान अपील में विचार करने योग्य हो।

15. मैंने पक्षकारगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना है तथा अभिलेख का अवलोकन किया है।

16. दिनांक 30.04.2007 के विचारण न्यायालय के निर्णय के अवलोकन से यह संकेत मिलता है कि विचारण न्यायालय ने पूर्ववर्ती वाद (earlier suit) और उस पर उप-न्यायाधीश के न्यायालय द्वारा 30.01.1978 को पारित आदेश पर ध्यान दिया। विचारण न्यायालय ने यह टिप्पणी की कि वादग्रस्त संपत्ति के हक (title) और स्वामित्व (ownership) के संबंध में मूल वादी के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष होने के बावजूद, उसके द्वारा इसे चुनौती नहीं दी गई थी। विचारण न्यायालय ने इस वाद को सि.प्र.सं. (CPC) की धारा 11 के तहत वर्जित मानते हुए खारिज कर दिया, जो 'पूर्वन्याय' (res judicata) के सिद्धांत की परिकल्पना करती है। विचारण न्यायालय ने यह भी राय दी कि मूल प्रतिवादी की पत्नी एक आवश्यक पक्षकार (necessary party) थी, जिसे अपीलार्थीगण/वादीगण ने पक्षकार नहीं बनाया, भले ही वर्तमान वाद के अभिवचनों और दस्तावेजों तथा मुकदमेबाजी के पिछले दौर से यह संकेत मिलता था कि भूमि का कब्जा और स्वामित्व मूल प्रतिवादी की पत्नी के पास था। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थीगण/वादीगण द्वारा दायर वाद को जुर्माने (costs) के साथ खारिज कर दिया और यह निष्कर्ष दिया कि अपीलार्थीगण/वादीगण द्वारा विलंबकारी हथकंडे (dilatory tactics) अपनाने के कारण पक्षकारगण लंबे समय से मुकदमेबाजी कर रहे थे। विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए प्रासंगिक निष्कर्ष इस प्रकार हैं:-"

“23. "अभिलेख के अवलोकन से यह पता चलता है कि स्वामित्व (ownership) के संबंध में वादी के विरुद्ध निष्कर्ष दिए जाने के बावजूद, वादी ने उक्त आदेश को कभी चुनौती नहीं दी। हालाँकि, प्रतिवादी द्वारा उक्त आदेश के विरुद्ध एक अपील दायर की गई थी। किंतु, अपील के दौरान वादी ने यह बयान देते हुए अपना वाद (suit) वापस लेने की मांग की कि उसे अब व्यादेश (injunction) के संरक्षण की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वे अपने कब्जे की रक्षा करने की स्थिति में हैं। वादी वर्तमान वाद में यह दावा करता रहा है कि अपील में उसके द्वारा वाद इस अनुमति (liberty) के साथ वापस लिया गया था कि वह उसी वाद-हेतुक (cause of action) पर नया वाद दायर कर सके। परंतु, विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश श्री एच.के.एस. मलिक की अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 13.01.1981 के आदेश की प्रमाणित प्रति के अवलोकन से पता चलता है कि प्रतिवादी द्वारा दायर अपील को वादी के बयान के आलोक में निष्प्रभावी (infructuous) होने के कारण खारिज कर दिया गया था। वादी को वैसा कोई अधिकार या अनुमति प्रदान नहीं की गई थी जैसा कि दावा किया गया है।"

"अतः, यह स्पष्ट है कि दिनांक 30.01.1978 के निर्णय के निष्कर्ष, जिन्हें चुनौती नहीं दी गई थी, पहले ही अंतिमता (finality) प्राप्त कर चुके हैं।

24. हालाँकि, वर्तमान वाद (suit) में भी वादी ने अपने दावे को समान अभिवचनों (pleadings) पर आधारित किया है। मेरी सुविचारित राय में, वादी का वाद स्पष्ट रूप से 'पूर्व न्याय' (res judicata) के सिद्धांतों और सिविल प्रक्रिया संहिता (CPC) के आदेश 23 नियम 1 (4) के प्रावधानों द्वारा वर्जित (barred) है।"

*****

26. प्रतिवादी ने दोनों वादों (suits) में वादीगण के स्वामित्व (ownership) से इनकार किया है। प्रतिवादी ने इसके बजाय यह दावा किया है कि प्रतिवादी की पत्नी श्रीमती शकुंतला देवी वादग्रस्त प्लॉटों की स्वामी थीं। इन अभिवचनों (averments) के आधार पर, पिछले वाद में भी स्वामित्व के संबंध में मुद्दा (issue) तैयार किया गया था।"

27. जैसा कि पहले ही देखा गया है कि विद्वान अपीलीय न्यायालय (श्री एच.के.एस. मलिक) ने वादी को उसी वाद-हेतुक (cause of action) पर

दूसरा वाद दायर करने की कोई अनुमति (liberty) प्रदान नहीं की थी। अतः, वादी का वाद 'पूर्व न्याय' (res judicata) के सिद्धांतों से प्रभावित है और सिविल प्रक्रिया संहिता (CPC) की धारा 11 द्वारा स्पष्ट रूप से वर्जित (barred) है; और वादी को स्वामित्व (ownership) के उस मुद्दे पर फिर से बहस करने या उसे उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती, जो पहले से ही एक सक्षम न्यायालय द्वारा पिछले वाद में न्यायनिर्णीत (adjudicated) हो चुका है।

*****

29. यह स्पष्ट है कि यदि वादी, वाद की विषय-वस्तु या दावे के किसी भाग के संबंध में कोई नया वाद दायर करने की अनुमति लिए बिना, अपने वाद या दावे के किसी भाग को छोड़ देता है, तो उसे ऐसी विषय-वस्तु या दावे के उस भाग के संबंध में कोई भी नया वाद दायर करने से रोक दिया जाता है।

30. प्रस्तुत मामले में भी, वादी को पिछले वाद की ही विषय-वस्तु के संबंध में कोई नया वाद दायर करने की अनुमति प्रदान नहीं की गई थी। पिछले वाद में अपनी याचिका वापस लेने के अपने बयान में उन्होंने वादग्रस्त संपत्ति पर अपने स्वामित्व के दावे के संबंध में एक शब्द तक का उल्लेख नहीं किया है, जबकि उनके खिलाफ स्पष्ट निष्कर्ष मौजूद हैं।

31. इसके अतिरिक्त, प्रतिवादीगण ने वादग्रस्त भूमि के संबंध में कई दस्तावेज जैसे विक्रय विलेख (sale deeds), विक्रय करार (agreement to sell) और राजस्व अभिलेख, अभिलेख पर रखे हैं। प्रतिवादीगण के पक्ष में मौजूद इन स्वामित्व संबंधी दस्तावेजों के विरुद्ध वादी द्वारा किसी भी अनुतोष (relief) की मांग नहीं की गई है, जबकि ये दस्तावेज वादी की जानकारी में थे क्योंकि प्रतिवादी ने पिछले वाद में दायर अपने लिखित बयान (written statement) में इनका उल्लेख किया था।"

32. अतः, वादी का वाद (suit) सिविल प्रक्रिया संहिता (CPC) के आदेश 23 के प्रावधानों द्वारा भी वर्जित (barred) है। मेरे उपरोक्त निष्कर्षों के आलोक में, मुद्दा संख्या 3 और मुद्दा संख्या 9 दोनों का निर्णय वादी के विरुद्ध और प्रतिवादी के पक्ष में किया जाता है। तदनुसार, मुद्दा संख्या 1 का भी वादी के विरुद्ध निपटान किया जाता है।"

17. अपीलार्थीगण/वादीगण द्वारा दायर एक अपील के माध्यम से उपरोक्त निर्णय को चुनौती दी गई थी और प्रथम अपीलीय न्यायालय ने दिनांक 04.05.2009 के निर्णय के माध्यम से विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्षों को उलट दिया और यह माना कि उसने (विचारण न्यायालय ने) पहले वापस लिए गए एक वाद के निष्कर्षों पर गलत तरीके से भरोसा किया था। यह भी माना गया कि विवादित संपत्ति पर अपीलार्थीगण/वादीगण का कब्जा विश्वसनीय गवाहों और भूमि अभिलेखों द्वारा समर्थित था, जबकि प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण के दावे निराधार थे।

18. तत्पश्चात, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, इस न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील में मामले को वापस प्रथम अपीलीय न्यायालय के पास भेज (remand) दिया गया था।

19. प्रथम अपीलीय न्यायालय ने, भेजने (remittal) के बाद साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन करते हुए यह माना कि दिनांक 21.10.1937 के विक्रय विलेख (sale deed), जो 27.10.1937 को पंजीकृत हुआ था, के निष्पादन और पंजीकरण को अभिलेखागार विभाग (Department of Archives) द्वारा मूल पंजीकरण अभिलेख प्रस्तुत किए जाने के माध्यम से विधिवत सिद्ध कर दिया गया था। विक्रय विलेख (sale deed) की प्रमाणित प्रति, प्रदर्श (Ex.) DW1/1, और उसके साथ संलग्न साइट प्लान (मौका-ए-नक्शा), प्रदर्श (Ex.) DW1/2 और प्रदर्श (Ex.) DW1/2A, स्पष्ट रूप से खसरा नंबर 807 के हिस्से के रूप

में कुल 2195 वर्ग गज के प्लॉट संख्या 49 से 60 के समावेश को दर्शाते हैं। न्यायालय ने टिप्पणी की कि विक्रय विलेख (sale deed) उचित निष्पादन, पंजीकरण और स्टांप शुल्क के भुगतान को दर्शाता है, जिससे भूमि के अंतरण के संबंध में सार्वजनिक सूचना का उद्देश्य पूरा होता है। यह आगे साबित किया गया था कि विवादित प्लॉट 50 से 53 सहित अन्य प्लॉट, या तो पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से अंतरित किए गए थे, जैसा कि साइट प्लान (मौका-ए-नक्शा) में विस्तृत रूप से दर्शाया गया था, जो पंजीकरण अभिलेख का एक अभिन्न अंग था।

20. न्यायालय ने यह माना कि विक्रय विलेख (sale deed) की वैधता के संबंध में उठाई गई आपत्तियां गुणागुण रहित थीं, क्योंकि मूल पंजीकरण अभिलेख ने इसके निष्पादन और पंजीकरण की पुष्टि की थी। न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि प्रमाणित प्रति पर वास्तविकता की उपधारणा (presumption of genuineness) लागू नहीं हो सकती, और इस बात पर जोर दिया कि मूल पंजीकरण अभिलेख को विधिवत समन (summon) और सत्यापित किया गया था। इसके अलावा, न्यायालय ने अवलोकन किया कि उमराव सिंह और भारत सिंह द्वारा भूमि के अविभाजित स्वामित्व ने उन्हें अपने संबंधित हिस्सों के भीतर प्लॉटों के अंतरण की अनुमति दी थी। प्लॉट संख्या 50 से 53 से संबंधित लेनदेन सहित बाद के नामांतरण (mutations) और बिक्री को वैध माना गया, जिसमें साइट प्लान (मौका-ए-नक्शा) ने अंतरण के विस्तार की पुष्टि की। न्यायालय ने इस आशय का निष्कर्ष दर्ज किया कि

दिनांक 21.10.1937 के विक्रय विलेख के माध्यम से प्लॉट संख्या 50 से 53 के अंतरण ने उमराव सिंह को उक्त विक्रय विलेख के दायरे में आने वाली भूमि के किसी भी अधिकार, हक या हित से पूरी तरह वंचित (divest) कर दिया था, और परिणामस्वरूप, उनके वंशजों, जिनमें मूल वादी और वर्तमान अपीलार्थीगण/वादीगण शामिल हैं, के स्वामित्व के दावे गुणागुण रहित हैं और उन्हें बरकरार नहीं रखा जा सकता।

21. न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि दिनांक 21.10.1937 के विक्रय विलेख (sale deed) ने विलेख में निर्दिष्ट भूमि को वैध रूप से श्री प्राण नाथ सरवरिया को अंतरित कर दिया था। तत्पश्चात, उन्होंने इस भूमि का एक हिस्सा, विशेष रूप से प्लॉट संख्या 50 से 54, दिनांक 08.02.1938 के विक्रय विलेख के माध्यम से श्री मूल सिंह अरोड़ा को अंतरित कर दिया। तत्पश्चात, श्री मूल सिंह अरोड़ा की विधवा, श्रीमती शकुंतला अरोड़ा ने दिनांक 04.12.1963 के दो विक्रय विलेखों (sale deeds) और दिनांक 12.01.1983 के एक विक्रय करार (agreement to sell) के माध्यम से प्रश्नगत प्लॉटों को मूल प्रतिवादी, यानी श्री हरि किशन लाल (जो वर्तमान प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण के पूर्वज थे) की पत्नी श्रीमती शकुंतला देवी को बेच दिया।

22. यह देखा गया है कि चूंकि जिन अन्य मुद्दों पर निर्णय लिया गया था, उनका इस न्यायालय द्वारा मामले को अपीलीय न्यायालय को भेजते (remit) समय तैयार किए गए मुद्दे पर सीधा प्रभाव था, इसलिए प्रथम अपीलीय

न्यायालय ने पाया कि उच्च न्यायालय द्वारा तैयार किया गया अतिरिक्त मुद्दा प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण के पक्ष में था और, इसलिए, पहले से तय किए गए अन्य मुद्दों पर निर्णय इसमें विलीन (merge) हो गया और अपीलार्थीगण/वादीगण द्वारा दायर वाद को खारिज कर दिया गया। प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्ष इस प्रकार हैं:-

> *"तदनुसार यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि अपीलार्थी वादग्रस्त संपत्ति संख्या 50 से 53 का स्वामी नहीं है और उसमें उसका कोई अधिकार, हक या हित नहीं हो सकता है। उक्त अतिरिक्त मुद्दे पर निष्कर्ष को देखते हुए, अपीलार्थी द्वारा कोई दावा नहीं किया जा सकता है। प्लॉट संख्या 51 से 53 के संबंध में, प्रत्यर्थी की पत्नी शकुंतला देवी विक्रय विलेख (sale deed) के आधार पर स्वामी होंगी और उन प्लॉटों का कब्जा प्राप्त करने के लिए या उन प्लॉटों के संबंध में व्यादेश (injunction) प्राप्त करने के लिए उनके परिवार के सदस्यों के विरुद्ध कोई व्यादेश नहीं मांगा जा सकता है। भले ही प्लॉट संख्या 50 के संबंध में अपूर्ण हक (imperfect title) या हक न होने की आपत्ति उठाई गई हो क्योंकि केवल विक्रय करार (agreement to sell) ही मौजूद है, फिर भी संपत्ति अंतरण अधिनियम (Transfer of Property Act) की धारा 53-क का संरक्षण उपलब्ध होगा।" विक्रय करार (agreement to sell) यद्यपि स्वामित्व (title) का दस्तावेज नहीं है, लेकिन यह खरीदार अर्थात् मूल सिंह की विधवा शकुंतला देवी के माध्यम से प्रतिवादी की पत्नी शकुंतला देवी के अधिकार और हित का सूचक है; और चूंकि यह दिनांक 12.01.1973 का है, अर्थात् पंजीकरण अधिनियम और संपत्ति अंतरण अधिनियम में वर्ष 2002 में हुए संशोधन से पहले का है, इसलिए यह संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53क के तहत 'आंशिक पालन' (part performance) के संरक्षण के लिए साक्ष्य में स्वीकार्य होगा और प्लॉट संख्या 50 में खरीदार के कब्जे को किसी भी स्थिति में एक अतिचारी (trespasser) का कब्जा नहीं कहा जा सकता है वैसे भी, अपीलार्थी का वादग्रस्त प्लॉट संख्या 50 से 53 में कोई अधिकार, हक या हित न होने के कारण, उनके पक्ष में कोई व्यादेश (injunction) या कब्जा प्रदान नहीं किया जा सकता है। "उपरोक्त पृष्ठभूमि में बाद के किसी चरण में की गई कोई भी नामांतरण प्रविष्टि (mutation entry) या*

अपीलार्थी या उसके परिवार के सदस्यों के पक्ष में प्लॉट संख्या 50 से संबंधित कोई भी राशन कार्ड, स्वामित्व (title) न होने के उसी कारण से, प्रश्नगत प्लॉट में कोई अधिकार या हित पैदा नहीं कर सकता है।

"चूंकि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा मामला केवल माननीय उच्च न्यायालय द्वारा तैयार किए गए मुद्दे पर निष्कर्ष देने के लिए भेजा (remand) गया था, इसलिए किसी अन्य मुद्दे को छूने का कोई अवसर नहीं है, सिवाय उस सीमा तक जहां माननीय उच्च न्यायालय द्वारा तैयार किए गए मुद्दे पर निष्कर्ष का प्रभाव किसी अन्य मुद्दे पर पड़ता हो।

जैसा कि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा तैयार किए गए मुद्दे पर ऊपर दिया गया निष्कर्ष मुद्दा संख्या 1 और दिए जाने वाले अनुतोष (relief) पर अपना प्रभाव और असर डालता है, इसे माननीय उच्च न्यायालय द्वारा तैयार किए गए मुद्दे पर निष्कर्ष के प्रभाव के आधार पर संशोधित माना जा सकता है।"

पक्षकारगण के अधिवक्तागण ने पूरी तरह से यह जानते हुए इस मुद्दे को तैयार करने के लिए सहमति दी थी कि यही वह मुद्दा है जो प्लॉट संख्या 50-53 पर संबंधित पक्षकारगण के स्वामित्व (title) के दावे का निर्णायक होगा। यह निर्धारित करेगा कि क्या उमराव सिंह ने इन प्लॉटों को श्री पी. एन. सरवरिया को अंतरित किया था या उन्हें अपने पास बनाए रखना जारी रखा था; क्योंकि दिनांक 21.10.1937 के विक्रय विलेख (sale deed), जो 27.10.1937 को पंजीकृत हुआ था, के माध्यम से ही पी. एन. सरवरिया ने उस भूमि और प्लॉटों पर दावा किया था जिनका प्लॉट संख्या 50 से 53 हिस्सा हैं और इसी विक्रय विलेख के आधार पर मूल सिंह को विक्रय विलेख के माध्यम से प्लॉट संख्या 50 से 53 में अपना अधिकार प्राप्त हुआ और मूल सिंह की विधवा से, प्रतिवादी की पत्नी को विक्रय विलेखों और विक्रय करार (agreement to sell) के माध्यम से प्लॉट संख्या 50 से 53 में अपना हक, अधिकार और हित प्राप्त हुआ। तदनुसार, अपीलार्थी का वाद खारिज किया जाता है।

23. "आक्षेपित निर्णय के उपरोक्त विवेचन और पक्षकारगण के विद्वान अधिवक्तागण द्वारा प्रस्तुत दलीलों के आधार पर, यह देखा गया है कि प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण ने भले ही मूल विक्रय विलेख (Original Sale Deed)

प्रस्तुत नहीं किया था, फिर भी प्रथम अपीलीय न्यायालय ने सही पाया कि दिनांक 21.10.1937 के विक्रय विलेख के निष्पादन और पंजीकरण को 'एडिशनल बुक नंबर 1, वॉल्यूम नंबर 1931' में मूल पंजीकरण अभिलेख प्रस्तुत करके विधिवत सिद्ध कर दिया गया था, और इसकी प्रमाणित प्रति को प्रदर्श (Ex.) DW1/1 के रूप में भी प्रदर्शित किया गया था।"

24. आक्षेपित निर्णय के विरुद्ध अपीलार्थीगण/वादीगण द्वारा दी गई चुनौती का मुख्य आधार इस तर्क पर टिका है कि मूल विक्रय विलेख (original sale deed) प्रस्तुत न किए जाने के कारण दिनांक 21.10.1937 के विक्रय विलेख को प्रमाणित नहीं माना जा सकता था। यह संज्ञान में लिया गया है कि उपरोक्त आपत्ति प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष भी उठाई गई थी और 'अभिलेखागार विभाग' (Department of Archives) को जारी किए गए सम्मन के आलोक में इसे खारिज कर दिया गया था, जिन्होंने मूल पंजीकरण अभिलेख प्रस्तुत किए थे।

25. इसके अलावा, 30 वर्ष से अधिक पुराने दस्तावेजों की प्रमाणित प्रतियों (certified copies) की असलियत के पूर्वाभास/अनुमान (presumption of genuineness) के अभाव के संबंध में आपत्ति भी प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष उठाई गई थी, और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 90 के आलोक में उसे खारिज कर दिया गया था।

26. सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा दिए गए तथ्यों के निष्कर्षों से यह देखा गया है कि दिनांक 21.10.1937 के विक्रय विलेख (sale deed) ने, साइट प्लान (मौका-ए-नक्शा) (क्रमशः प्रदर्श (Ex.) DW1/2 और प्रदर्श (Ex.) DW1/2A) के साथ, खसरा नंबर 807 के हिस्से के रूप में प्लॉट नंबर 49 से 55 और 56 से 60 के श्री प्राण नाथ सरवरिया को अंतरण को स्पष्ट रूप से स्थापित कर दिया, जो कि प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण के हित-पूर्वाधिकारी (predecessor-in-interest) थे।

27. तत्पश्चात, न्यायालय ने अपीलार्थीगण/वादीगण के दावों को यह पुष्टि करते हुए खारिज कर दिया कि दिनांक 21.10.1937 के विक्रय विलेख (sale deed) ने प्लॉट नंबर 50 से 53 सहित भूमि को वैध रूप से श्री प्राण नाथ सरवरिया को अंतरित किया था, और बाद में, अन्य लेन-देन के माध्यम से, यह संपत्ति श्रीमती शकुंतला देवी को अंतरित हुई, जो मूल प्रतिवादी की पत्नी थीं और जिनका प्रतिनिधित्व उनके विधिक प्रतिनिधियों द्वारा किया जा रहा है जो यहाँ प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण हैं।

28. अत:, वर्तमान मामले में, यह देखा गया है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने वादग्रस्त संपत्ति में अपीलार्थीगण/वादीगण के अधिकार, हक और हित के संबंध में तथ्यों का एक सुस्पष्ट (categorical) निष्कर्ष दिया है। यह भी सही रूप से माना गया है कि प्लॉट नंबर 51 से 53 के संबंध में, मूल प्रतिवादी की पत्नी, शकुंतला देवी, विक्रय विलेख (sale deed) के आधार पर

वैध स्वामी हैं, और इन प्लॉटों के कब्जे के संबंध में या उनके उपयोग को रोकने के लिए उनके या उनके परिवार के सदस्यों के विरुद्ध कोई व्यादेश (injunction) जारी नहीं किया जा सकता था।

29. अपीलार्थीगण/वादीगण द्वारा प्रतिकूल कब्जे (adverse possession) के दावे पर आधारित प्रस्तावित विधिक प्रश्न के संबंध में, यह देखा गया है कि उनके द्वारा निचले न्यायालयों के समक्ष इस आशय का कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, और न ही किसी न्यायालय ने इस पहलू पर कोई निष्कर्ष दिया है।

30. चाहे जो भी हो, चूंकि वर्तमान अपील केवल तथ्यों के प्रश्न उठाती है और वे सिविल प्रक्रिया संहिता (CPC) की धारा 100 के अधीन विचारणीय नहीं हैं, इसलिए इस अपील का विफल होना निश्चित है।

31. यह एक सुस्थापित विधि (trite law) है कि द्वितीय अपीलीय कार्यवाही में, न्यायालय केवल तथ्यों के त्रुटिपूर्ण निष्कर्षों के आधार पर आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने से परहेज करता है, चाहे ऐसी त्रुटियाँ कितनी भी स्पष्ट या गंभीर क्यों न प्रतीत हों। यह रेखांकित करना अनिवार्य है कि सिविल प्रक्रिया संहिता (CPC) की धारा 100 में 1976 के संशोधन ने द्वितीय अपीलीय न्यायालय की शक्तियों को काफी सीमित (circumscribed) कर दिया है। इसलिए, धारा 100 सिविल प्रक्रिया संहिता (CPC) के तहत द्वितीय अपील का दायरा अब कड़ाई से उन मामलों तक सीमित है जहाँ न केवल कानून का प्रश्न

मौजूद हो, बल्कि वह प्रकृति में स्पष्ट रूप से 'सारवान' (substantial) भी हो। संशोधन के पश्चात, द्वितीय अपील की पोषणीयता (maintainability) कानून के एक सारवान प्रश्न के अस्तित्व पर निर्भर करती है।

32. उपरोक्त के आलोक में, वर्तमान मामले में कानून का कोई प्रस्तावित सारवान प्रश्न (substantial question of law) उत्पन्न नहीं होता है।

33. तदनुसार, वर्तमान अपील के साथ-साथ लंबित आवेदन को खारिज किया जाता है। जुर्माने के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया गया है।

(पुरुषेंद्र कुमार गौरव)
न्यायाधीश

28, जनवरी, 2025
पी/एमजेओ

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*